P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-III* Issue- X* June -2016

# वैदिक इन्द्र का सामाजिक आधार

**मधु सत्यदेव**
प्रवक्ता,
संस्कृत विभाग,
दी0द0उ0 गोरखपुर विश्वविद्यालय,
गोरखपुर

**सारांश**

इन्द्र को वैदिक देवमंडल में सबसे प्रमुख स्थान प्राप्त है। ऋग्वेद में इन्द्र के प्रति सबसे अधिक सूक्त हैं। समस्त ऋग्वेद के चतुर्थांश सूक्तों में केवल इन्द्र की ही स्तुति उपलब्ध होती है। इस प्रकार लगभग 250 सूक्तों में ऋग्वेद में इन्द्र का गुणगान है। इसके अतिरिक्त ऐसे सूक्त भी हैं जिनके एक अंश में इन्द्र का स्तवन हुआ है या किसी अन्य देवता के साथ इन्द्र का उल्लेख है। इनकों सम्मिलित करने पर इन्द्र विषयक सूक्तों की संख्या 300 तक पहुॅच जाती है। इन्द्र सर्वप्रथम विद्युत देवता है। वर्षा और अन्धकार के राक्षसों को परास्त करके जल प्रवाहित करना अथवा प्रकाश का प्रसार करना उनके स्वरूप के गाथात्मक तत्व हैं। गॉव रूप में ठर्न्छ युद्ध के देवता हैं जा आर्यों की शत्रुओं पर विजय पाने में सहायता करते हैं।

**मुख्य शब्द** : वैदिक देवमण्डल, इन्द्र, ऋग्वेद

**प्रस्तावना**

इन्द्र मध्यम लोक के प्रधान देवता हैं। वे वायु में व्याप्त हैं।[1] वे आग्नि, वायु और सूर्य की त्रयी में वायु के प्रतिनिधि।

ऋग्वेद में इन्द्र की शारीरिक विशेषताओं का वर्णन है। उनके सोमपान शक्ति के वर्णन के प्रसंग में उनके उदर का निरूपण किया गया है।[2] सोमपान के पश्चात उनके उदर की तुलना एक हृद से की गयी है।[3] कई बार उनके शिप्र को लक्षित किया गया है। सुशिप्र या शिप्रिन विशेषण बहुसंख्या के उन्हीं के लिए आये हैं। सोम–पान के उपरान्त वे अपने जबड़े पीसने लगते है। जब वे मदमत्त हो आगे बढ़ते हैं तब उनकी मूछें ताव के साथ हिलती हैं।[4] उन्हें हरिकेश[5] और हरिश्मश्रु[6] कहा गया है। उनका शरीर हरित है। द्वन्द्व–विषयक एक सूत्र में आदि के अन्त कर हरि शब्द के साथ शब्द क्रीड़ा की गयी है। कभी–कभी उन्हें हिरण्यवर्ण बताया गया है। [7] हिरण्यबाहु[8] और आयस–हस्त विशेषणों का प्रयोग भी हुआ है। उन्हीं के लिए आये[9] बज्रबाहु शब्द द्वारा तो उनका स्मरण बहुधा आया है। विशेषतया उनकी बाहें अजानु लम्बी [10] महान शक्तिशाली एवं सुडौल हैं। उनके मनमोहक रूप में सूर्य की लोहित प्रभा चमचमाती है। [11] वे जैसा चाहें बन जाते हैं।[12]

निरपवाद रूप से इन्द्र का अस्त्र बज्र है। विद्युत की कडक ही गाथात्मक रूप में बज्र कहाती है। बहुधा वर्णन आता है कि बज्र को उनके लिए त्वष्टा ने बनाया था।[13] किन्तु साथ ही यह भी आता है कि उशना ने इस बनाकर इन्द्र को अर्पित किया था। [14] ऐतरेय ब्राह्मण[15] के अनुसार देवताओं ने ही इन्द्र को बज्र दिया था। यह पानी से आवृत होकर समुद्र में रहता है इसका स्थान सूर्य के नीचे है। [16] साधारणतया इसे आयस बताया गया है,[17] किन्तु कभी–कभी हिरण्यय[18] हरित[19] या अर्जुन[20] बनकर भी यह सामने आता है। यह चतुष्कोण[21] शतकोण है, शत–पर्व है [22] और सहस्र–भृष्टिहै।[23] यह निश्चित हैं[24] और वह भी चाकू से अधिक जैसे सांड अपने सींगो को धिसकर तेज करता वैसे ही इन्द्र भी इसे पैनाते हैं। [25] इसका उल्लेख अश्मन् या पर्वत की भॉति हुआ है। [26] इन्द्र के बज्र की उपमा आकाशस्थ सूर्य से दी गयी है। बज्र शब्द से बने अथवा उसके साथ समस्त होकर बने विशेषणों का प्रयोग द्वन्द्व ही तक सीमित हैः बज्रभृत् बज्रवत्, बज्र–दक्षिण विशेषण निरपवाद उन्हीं के लिए आये हैं। किन्तु बज्रबाहु या बज्र–हस्त और इन सबसे अधिक प्रचलित वज्रिन रूद्र, मरूदृण और मन्यु के लिए भी क्रमशः एकएक बार आये हैं।

कभी–कभी इन्द्र धनुष और बाण हाथ में लेकर सामने आते हैं।[27] इनके इन्द्र स्वर्णिम हैं, सहस्र भृष्टि है और हजारों परोवाले हैं। इन्द्र के पास एक अंकुश भी है जिससे वे धन बॉटते हैं[28] और जिसका प्रयाग वे कभी–कभी शस्त्र के रूप में भी करते हैं।[29] उनके पास एक जाल भी है जिससे वे अपने सभी शत्रुओं को पराजित कर देते हैं।[30]

इन्द्र एक सुनहरे रथ पर चलते हैं। इसकी गति विचार से भी कहीं अधिक तेज हैं। [31] रथेष्ठा विशेषण निःसन्देह इन्द्र के लिए ही आया है। उनके रथ को दो हरे घोड़े खींचते हैं। 'हरी' पद का प्रयोग बहुतायत से हुआ है और

बहुसंख्यक स्थानों पर इसका अर्थ इन्द्र के घोड़े हैं। कतिपय मंत्रों में इनकी संख्या दो से लेकर शत् सहस्र या ग्यारह शत तक बनायी गयी है। [32] ये घोड़े सूर्य–चक्षस है। [33] ये अपने जबड़ों को चपचपाते एवं हिड्कार करते हैं।[34] ये लहराती अयालवालें [35] अथवा हिरण्यवर्ण केशवाले हैं।[36] उनके बाल मयूर के परों जैसे या मयू–पुच्छ की तरह के हैं।[37] वे शीघ्र ही लम्ण रास्ता तय कर डालते हैं और द्वन्द्व को वैसे ही ले जाते हैं जैसे कि ष्येन के पर श्येन पक्षी को।[38] ये घोड़े स्तुतियों द्वारा जोते जाते है। [39] जिसका अर्थ यह हुआ कि इन्द्र को यज्ञ के आह्वानों द्वारा लाया जाता है। जहॉ–तहॉ यह भी आया है कि इन्द्र को सूर्य के घोड़े ले जाते हैं।[40] अथवा उन्हें वायु के घोड़े ले जाते हैं।[41] इन्द्र वायु के सारथि है[42] अथवा रथ पर बैठे वे उनके साथी हैं।[43] इन्द्र के रथ ओर घोड़ो को ऋभुओं ने बनाया था।[44] एक बार कहा गया है कि इन्द्र को स्वर्णिम कशा दी गयी थी।[45]

इन्द्र के विशाल आकार का उल्लेख अनेक मंत्रों में आता है। जब इन्द्र ने दो असीम लोको को पकड़ा तब वे मुट्ठी भर ही हुए।[46] वे द्युलोक, पृथ्वी एवं अन्तरिक्ष से महत्व में आगे बढ़ जाते हैं। [47] दोनों लोक (रोदसी) उनके केवल आधे के बराबर है। [48] द्युलोक एवं पृथ्वी उनकी मेखला के लिए पर्याप्त नहीं होते। [49] यदि पृथ्वी दस गुनी और विस्तृत होती तो इन्द्र के बराबर हो पाती।[50] यदि इन्द्र के पास सौ द्युलोक एक सौ पृथ्वी लोक होते तो न तो हजार सूर्य ही उनकी बराबरी कर पाते और न दोनों लोक ही।

इन्द्र के तुल्य उत्पन्न और उत्पन्न होने वाले में कोई भी उनके तुल्य नही। [51] कोई भी व्यक्ति, पार्थिव या द्विव्य न तो ऐसा उत्पन्न ही हआ है और न उत्पन्न होगा ही जो उनकी बराबरी कर सके। [52] देव या मानव कोई भी न उससे बढ़कर हैं और न उसके समान ही।[53] न तो पूर्वकाल के, न उत्तरकाल के, न ही निकट भूत के प्राणी उनकी महिमा के अन्त पा सके हैं। [54] न तो देवता न उत्तरकाल के न ही निकट भूत के प्राणो उनकी महिमा का अन्त पा सके हैं। [55] न तो देवता न मनुष्य और न जल ही उनकी शक्ति की अवधि तक पहुँच पाये हैं। [56] देवताओं में कोई भी उनके तुल्य ज्ञात नहीं हुआ है कोई भी भूत या वर्तमान काल में उत्पन्न व्यक्ति उनकी तुलना नहीं कर सकता।[57] वे देवताओं को अतिक्रान्त कर जाते हैं।[58] सभी देवता उनके कृत्यों एवं मनतव्यों को शिथिल करने में असमर्थ रहते हैं यहॉ तक कि वरूण और सूर्य भी उनके शासन में सीमित हैं।[59] मित्र, अर्यमन् और वरूण के शत्रुओं का नाश करने के निमित्त द्वन्द्व का आह्वान किया गया है।[60] और कहा गया है कि युद्ध के द्वारा उन्हीं के देवताओं के लिए पर्याप्त स्थान प्राप्त किया। एकमात्र इन्द्र ही सम्पूर्ण विश्व के स्वामी हैं।[61] गतिमानों और प्राणवानों के व पति है।[62] वे गतिमान वस्तुओं तथा मनुष्यों के राजा है, चलने वालों और देखने वालों के वे नेत्र हैं।[63] वे मानव जातिया और देवों के नेता हैं।[64] अनेक बार उन्हें विश्व का शासक कहा गया है और इससे भी अधिक बार उन्हें स्वतंत्र शासक बताया गया है।[65]

वृत्र के साथ युद्ध करना इन्द्र का विशिष्ट कार्य है। वृत्र–गाथा की महत्ता के कारण इन्द्र का प्रमुख विशेषण 'वृत्रहन्' बन गया है। ऋग्वेद में इसका उनके लिए प्रयाग लगभग 70 बार हुआ है। अग्नि ही एक मात्र दूसरे देवता है जिनके लिए इनका प्रयोग अनेक बार हुआ है और अग्नि के लिए इस विशेषण के प्रयोग का आधार यह है कि वे भी इन्द्र के साथ इन्द्र के साथ द्वन्द्व में बार–बार संबद्ध हुए है। यद्यपि कभी–कभी स्पष्ट शब्दों में इस बात का उल्लेख मिलता है कि वृत्र को इन्द्र ने अकेले ही अपनी शक्ति से मारा।[66] तथापि अन्य देवता भी उनके इस वीर कृत्य में उनका हाथ बॉटते दिखाई पड़ते हैं। फिर भी इस काम का श्रेय इन्द्र को दिया गया है। सामान्यतः देवता लोग किसी कार्य या युद्ध में [67] अथवा वृत्र–वध में अपना अग्रसर करते हुए कहे गये हैं। देवताओं ने वृत्र वध में इन्द्र की शक्ति को बढ़ाया[69] उन्होंने इन्द्र में ओज का संचार किया[70] अथवा उनके हाथों में वज दिया है [71] किन्तु सबसे अधिक बार तो उन्हें इस काम के लिए मरूतो से प्रेरणा मिली है।[72] यहॉ तक कि वृत्र से भयभीत होकर जब अन्य सभी देवता भाग गये तब मरूद्गण ने ही उनका साथ दिया था। किन्तु एक मन्त्र में मरूतों द्वारा भी इन्द्र को छोड़ देना दिखाया गया है।[73] वृत्र–युद्ध मे अग्नि,सोम और विष्णु अनेक बार इन्द्र के सहायक बनते हैं। यहॉ तक कि पृथिवीस्थ पुरोहित भी वृत्र–युद्ध में इन्द्र का साथ देते हैं।[74] उपासकों ने(सरिता) इन्द्र के साथ में वृज धारण कराया[75] और यज्ञ ने वृत्र–वध में वृज की सहायता की।[76]

इन्द्र वृत्र के अलावा और बहुत से छोटे–बड़े दानवों के साथ ही युद्ध में प्रवृत्त होते हैं।इनमें से उरण नामक राक्षस के, जिसका उल्लेख केवल एक बार हुआ है[77] 99 बॉह है, विश्वरूप के तीन सिर और छः नेत्र हैं।[78] इन्द्र अंर्बुद को अपने पैरों तले कुचलते अथवा हिम में दबा कर मारते हैं।[79] कभी–कभी यह भी कहा गया है कि इन्द्र दानव–सामान्य ही हत्या करते हैं। इस प्रकार कहावत है कि वे अपने चक्र में असुरों का उन्मूलन करते हैं, अपने वृज से वे राक्षसों को उसी तरह समाप्त करते हैं जैसे कि अग्नि सूखे वन को।[80] द्रोहियों को वे सरलता से पराजित कर देते है।[81]

इन्द्र ने प्रकाश और दिव्य जलों को जीता।[82] वृत्र की हत्या के लिए तथा प्रकाश की प्राप्ति के लिए इनका आह्वान बार–बार किया गया है। आपस वृज के द्वारा वृत्र–वध करने के उपरान्त उन्होंने मनुष्य के लिए सलिल को प्रवाहित किया और सूर्य को उसके भासमान रूप में द्युलोक में स्थापि किया।[83] दानव हन्ता इन्द्र ने जल के परिप्लाव को समुद्र की ओर प्रवाहित किया, सूर्य को जन्म दिया और गौओं को हासिल किया।[84] दानवों का वध करने के उपरान्त उन्होंने सूर्य और सलिलों को पाया।[84] दानवराज का वध करके और पर्वतों से जलों को उन्मुक्त करके उन्होंने सूर्य, आकाश, और उषस् को जन्म दिया।[85] जब इन्द्र ने वायुमण्डल में से दानव को उड़ाया तो जगमग उठा।[86] इन्द्र सूर्य के जनक हैं।[87] सूर्य की भॉति उषा का आविर्भाव भी इन्द्र करते हैं।[88] उन्होंने उषाओं और सूर्य को प्रकाशित किया[89] वैदिक काल में विष्णु का इन्द्र से घनिष्ठ सम्बन्ध है और यहॉ विष्णु को इन्द्र के सहायक का स्थान प्राप्त है। इसी कारण पुराण काल में विष्णु को उपेन्द्र या इन्द्र का अनुज कहा गया है। वाल्मीकि रामाायण (उत्तरकांड सातवॉ सर्ग) में भी

विष्णु को 'हरिहयानुज' कहा गया है जिसका अर्थ भी इन्द्र का छोटा भाई है।

वैदिक कालीन अपराजित इन्द्र परवर्ती काल में असुर, दैत्य, दानवों, राक्षसों से पराजित होने लगते हैं। पराजित इन्द्र की रक्षा के लिए दुर्गा, शिव, और विष्णु को आना पड़ता है। रावण पुत्र मेघनाद का नाम ही इन्द्र पर विजय प्राप्त करने के कारण इन्द्रजीत पड़ गया था। मेघनाद ने पहले रथारूढ़ इन्द्र के सारथि मातलि को घायल कर दिया। तब इन्द्र ने रथ को छोड़कर सारथि को विदा कर दिया और एरावत हाथी पर आरूढ़ हो गये। मेघनाद अपनी माया के कारण बहुत प्रबल हो रहा था। वह अदृश्य होकर आकाश में विचरने लगा और इन्द्र को माया से व्याकुल करके बांणों द्वारा आक्रमण किया। रावण कुमार को जब अच्छी तरह मालूम हो गया कि इन्द्र बहुत थक गये हैं तब उन्हें माया से बांधकर अपनी सेना में ले आया।[90] बाद में ब्रह्मा से इन्द्र को छुड़ाने के बदले मेघनाद ने वर प्राप्त किया।[91] इसी प्रकार इन्द्र के बली, महिषासुर शुम्भ–निशुम्भ, कालनेमी द्वारा पराजय वर्णन पुराणों और महाकालों में मिलता है। इसके अतिरिक्त विष्णु के अवतारों का भी इन्द्र से यदा–कदा प्रत्यक्ष – अप्रत्यक्ष संघर्ष होता है जिससे अन्ततः इन्द्र को अपनी भूल स्वीकार करनी पड़ती है। राम ने इन्द्र पुत्र जयन्त की एक आँख निकालकर दण्डित किया था तो कृष्ण ने इन्द्र के स्थान पर गोवर्धन पर्वत की पूजा करवायी।[92] और इन्द्र के कुपित होकर भारी वर्षा करवाने पर गोवर्धन उठाकर व्रजवासियों की रक्षा की। इन्द्र को स्वयं इसके लिए क्षमा याचना करनी पड़ी। कृष्ण पारिजात वृक्ष भी स्वर्ग से लाते हैं तो इन्द्र उनसे युद्ध करने का प्रयास करते हैं और अन्ततः पराजित होते हैं।[93] वैदिक काल के अत्यन्त बलशाली इन्द्र की इन पराजयों का क्या अर्थ है ? विद्वानों ने इसका उत्तर सामाजिक और भौगोलिक आधारों में ढूँढने की चेष्टा की है।

वैदिक कालीन राज्य और समाज में राजा को स्वरूप था वह अपनी जाति या समुदाय के नामक के समान था। आर्यों के कबीले के सर्वाधिक बलशाली और युद्ध–कुशल व्यक्ति नायक मान लिया जाता था और उसी के नेतृत्व में विकास कार्य होता था। साथ ही आवश्यकता पड़ने पर शत्रुओं से युद्ध भी किया जाता था। इन्द्र इसी प्रकार दैवी शक्तियों के नायक थे। पुराण काल तक राजा का स्वरूप चक्रवर्ती सम्राट का आकार ले चुका था। तदानुसार देवताओं को स्वरूप भी स्वाभाविक रूप से बदला और दैवी–शक्तियों में ब्रह्मा, विष्णु, महेश ने इन्द्र का स्थान ले लिया। ये शक्तियॉ मानव–जाति के जीवन से लकर मरण तक का कार्यभार सम्भालती थी। पृथ्वी का सम्राट अब केवल युद्ध का नायक ही नही था बल्कि राज्य के सातों अंगों का स्वामी था। स्वामी अर्थात् राजा तो वह स्वयं था।, शेष छः अयात्य, जन पर, दुर्ग, कोष, दंड तथा वल का समुचित प्रबन्ध भी उसी का दायित्व था। धरती के इस सम्राट का दायित्व जिन दैवी शक्तियों की कृपा पर निर्भर था वह जन्म देने वाल ब्रह्मा, पालन–पोषण करने वाले विष्णु और निश्चित समय पर मृत्युं तक पहचाने वाले शिव थे वैदिक कालीन इन्द्र नहीं।

## उद्देश्य

मानव जब अपनी समस्यओं का और संकट से पूर्णतः आक्रान्त हो जाता है, तब उसे ईश्वर का ध्यान आता है। वेदों में इन्द्र का स्वरूप अनेक आख्यानात्मक वर्णन और प्रतीकों के रूप में पल्लवित हुआ है। इन्होंने पृथ्वी मानव सहित सभी जीवों के जीवन की सुरक्षा एवं रहने के लिए पहाड़ों का पंखछेदन किया। इन्द्र के पूजक हैं वे उनके रक्षक एवं धन सम्पत्ति को भी उपलब्ध कराते हैं एवं उपासकों के शत्रुओं का नाश करते ह। वेदों में ये देवता हैं इनकी पूजा के माध्यम समाज को शान्ति सुव्यवस्था देते हैं। अपूजकों का दमन करते हैं एवं शक्ति प्रदान करते हैं। यह राष्ट्रीय देवता हैं आर्यों के युद्धक देवता हैं कल्याण कर्ता ।

## निष्कर्ष

सामाजिक कारण के साथ–साथ भारतीय मानव समुदाय की प्रकृति के रहस्यों को समझाने की बढ़ती क्षमता ने भी वर्षा के इस ब्रज धारी देवता के स्वरूप को प्रवावित किया, ऐसा भी विद्वानों का मानना है। मघ–गर्जना, भयंकर वृष्टि और आकाशीय विद्युत के कारणों को जानने–समझने वाला मानव–समुदाय इससे बचने के उपाय भी ढूढ़ रहा था और जैसे–जैसे इसमें सफलता मिलती गयी उसी प्रकार इसको संचालित करने वाले देवराज की अपराजिता का विम्ब भी उसी प्रकार टूटने लगा। जिसने भी वर्षा को अपने अनुकूल बना लिया साहित्यकार ने उसे 'इन्द्र' का विजेता बना दिया हो, ऐसा होना भी कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ऋग्वेद 1.51.227. ऋग्वेद 8.45.4 तथा 10.103.2
2. ऋग्वेद 2.16.2
3. ऋग्वेद 3.36.8
4. ऋग्वेद 211.17 तथा 19.23.1
5. ऋग्वेद 10.96.5
6. ऋग्वेद 10.23.4
7. ऋग्वेद 1.7.2
8. ऋग्वेद 7.34.4
9. ऋग्वेद 1.56.3
10. ऋग्वेद 6.19
11. ऋग्वेद 10.112.3
12. ऋग्वेद 3.53.8
13. ऋग्वेद 1.32.2
14. ऋग्वेद 1.121.12 तथा 5.34.2
15. ऐतरेय ब्राम्हण 4.1
16. ऋग्वेद 10.27.21
17. ऋग्वेद 1.52.8
18. ऋग्वेद 1.57.2 तथा ऋग्वेद 3.44.4
19. ऋग्वेद 10.96.3
20. ऋग्वेद 3.44.5
21. ऋग्वेद 4.22.2
22. ऋग्वेद 8.6.6
23. ऋग्वेद 1.80.12
24. ऋग्वेद 7.18.18
25. ऋग्वेद 1.130.4 तथा 1.55.1
26. ऋग्वेद 7.104..19
27. ऋग्वेद 8.17.10

28. ऋग्वद 10.44.9
29. ऋग्वेद 8..8.5
30. ऋग्वेद 10.44.9
31. अर्थवर्वेद 8.8.
32. ग्वेद 2.18.4
33. ऋग्वेद 1.16.1
34. ऋग्वेद 1.30.16
35. ऋग्वेद 1.10.3
36. ऋग्वेद 8.32.29
37. ऋग्वेद 8.1.25
38. ऋग्वेद 2.16.3
39. ऋग्वेद 2.18.3
40. ऋग्वेद 10.49.7
41. ऋग्वेद 4.46.2
42. ऋग्वेद 7.91.6
43. ऋग्वेद 1.111.1
44. ऋग्वेद 8.33.11
45. ऋग्वेद 3.30.5
46. ऋग्वेद 3.46.3
47. ऋग्वेद 6.30.1
48. ऋग्वेद 1.173.6
49. ऋग्वेद 1.52.11
50. ऋग्वेद 4.18.4
51. ऋग्वेद 7.32.23
52. ऋग्वेद 6.30.4
53. ऋग्वेद 5.42.
54. ऋग्वेद 1.100.15
55. ऋग्वेद 1.165.9
56. ऋग्वेद 3.46
57. ऋग्वेद 7.21.7
58. ऋग्वेद 2.38.9
59. ऋग्वेद 10.89.8
60. ऋग्वेद 3.46.2
61. ऋग्वेद 1.101.5
62. ऋग्वेद 10.102.12
63. ऋग्वेद 3.34.2
64. ऋग्वेद 3.46.1
65. ऋग्वेद 1.165.8
66. ऋग्वेद 1.55.3 तथा 6.17.8
67. ऋग्वेद 8.12.22
68. ऋग्वेद 10.113.8
69. ऋग्वेद 1.80.15 तथा 6.20.2
70. ऋग्वेद 2.20.8
71. ऋग्वेद 3.32.4 तथा 10.73.1
72. ऋग्वेद 8.96.7
73. ऋग्वेद 8.7.31
74. ऋग्वेद 1.63.2
75. ऋग्वेद 3.32.12
76. ऋग्वेद 2.14.4
77. ऋग्वेद 10.99.6
78. ऋग्वेद 1.51.6
79. ऋग्वेद 6.18.10
80. ऋग्वेद 4.23.7
81. ऋग्वेद 3. 34.8
82. ऋग्वेद 2.19.3
83. ऋग्वेद 3.34.9
84. ऋग्वेद 1.32.4
85. ऋग्वेद 8.3.20
86. ऋग्वेद 8.12.9
87. ऋग्वेद 2.12.7
88. ऋग्वेद 3.44.2
89. ऋग्वेद वाल्मीकि रामायण उत्तराकांड 29वां सर्ग
90. वाल्मीकि रामायण उत्तरकांड 30वां सर्ग
91. भागवत पुराण 10/25–26
92. भागवत पुराण 10/59